उच्च न्यायालय उत्तराखंड, नैनीताल।

माननीय जस्टिस श्री आलोक कुमार वर्मा

03 फरवरी, 2022

आपराधिक विविध आवेदन संख्या 96/2022

के बीचः–

डॉ0 मीरतुन्जय कुमार ...आवेदक

और

उत्तराखंड राज्य और एक अन्य ...उत्तरदाता

आवेदक के लिए अधिवक्ता : श्री करण आनंद।

प्रतिवादी के लिए अधिवक्ता/राज्य : श्री पी.एस. उनियाल, राज्य के लिए विद्वान ब्रीफ होल्डर।

माननीय आलोक कुमार वर्मा, जे.

आवेदक–अभियुक्त डॉ0 मीरतुन्जय कुमार ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद ''कोड'' के रूप में संदर्भित) की धारा 482 के तहत इस न्यायालय के निहित अधिकार क्षेत्र का आह्वान कर, आरोप पत्र दिनांक 28.02.2019 को, समनिंग आदेश दिनांक 02.03.2019 और विद्वान विशेष न्यायाधीश, (सतर्कता), देहरादून के समक्ष लंबित, विशेष सत्र परीक्षण संख्या 01/2019 ''राज्य बनाम मीरतुन्जय कुमार मिश्रा'' केस क्राइम नंबर 09/2018 अंतर्गत धारा 120बी, 420, 467, 468, 471 भा0दं0सं0 तथा धारा 13 (1) (क) (ग) (घ) सपठित धारा 13 (2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में, ''अधिनियम'', 1988) को रद्द किए जाने की प्रार्थना की है।

2. आवश्यक तथ्य सीमित सीमा तक यह हैं कि आवेदक उत्तराखंड आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय, देहरादून (संक्षेप में, ''विश्वविद्यालय'') के रजिस्ट्रार का पद संभाल रहा था। विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति ने मुख्यमंत्री को संबोधित अपने पत्र 14.06.2018 मय प्रारंभिक अन्वेषण रिपोर्ट द्वारा वर्तमान आवेदक के 2013 से 2017 के बीच की अवधि के लिए विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार के पद पर कार्यकाल के दौरान आवेदक द्वारा वित्तीय अनियमितताओं के आरोपों के संबंध में अन्वेषण करने की सिफारिश की। 16.11.2018 को, राज्य सरकार के अतिरिक्त मुख्य सचिव द्वारा एफआईआर दर्ज कर, मामले की अन्वेषण की सिफारिश की गई। श्री प्रकाश सिंह, इंस्पेक्टर विजिलेंस ने खुली सतर्कता अन्वेषण की। अन्वेषण के बाद, उन्होंने आवेदक और सह–आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ 17.11.2018 को प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की। अन्वेषण के उपरान्त आरोप पत्र दायर किया।

3. अन्वेषण के दौरान, इस आशय के साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं कि अपने कार्यकाल के दौरान, आवेदक ने अपने सगे भाई की पत्नी को अवैध रूप से नियुक्त किया था। उसने फर्जी रेल और हवाई यात्रा दिखाकर प्रतिपूर्ति ली थी। उसने विश्वविद्यालय के

लिए मैसर्स अमेज़ॅन ऑटोमोशन (देहरादून) और मैसर्स क्रिएटिव वर्ल्ड सॉल्टिंग (देहरादून) से अवैध रूप से कंप्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक सामान खरीदे थे। इन फर्मों के मालिक आवेदक के करीब हैं। जिस स्थान पर इन फर्मों को काम करते दिखाया गया था वह आवेदक का निजी निवास था। इन कंपनियों के बैंक खाते फर्जी तरीके से खोले गए थे। इन फर्मों के बैंक खाते आवेदक द्वारा संचालित किए गए थे और इन बैंक खातों से आवेदक द्वारा धन प्राप्त किया गया था।

4. चार्जशीट प्रस्तुत करने के बाद, विद्वान विशेष न्यायाधीश (सतर्कता), देहरादून ने संज्ञान लिया और आवेदक के विरुद्ध धारा 120बी, 467, 468, 471, 420, भा0दं0सं0 तथा धारा 13 (1) (क) (ग) (घ) सपठित धारा 13 (2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अंतर्गत आलोच्य समनिंग आदेश पारित किया।

5. श्री करण आनंद, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता और श्री पी.एस. उनियाल, राज्य के लिए विद्वान ब्रीफ होल्डर को सुना गया।

6. श्री करन आनंद, आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आवेदक प्रासंगिक समय पर विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार का पद संभाल रहा था और उसे विश्वविद्यालय द्वारा आवेदक की पोस्टिंग से पहले विश्वविद्यालय को विभिन्न विक्रेताओं/आपूर्तिकर्ताओं द्वारा आपूर्ति की गई विभिन्न वस्तुओं/उपकरणों की अधिप्राप्ति/खरीद का काम नहीं सौंपा गया था। निर्धारित नियमों यानी उत्तराखंड अधिप्राप्ति नियम, 2008 के तहत कोई भी सामान खरीदने के लिए निर्धारित प्रक्रियाएं थीं। नियमों के अनुसार, एक खरीद समिति का गठन कर, विश्वविद्यालय के कुलपति द्वारा अनुमोदित किया गया था। अनुबंध का देना कुलपति और विक्रेताओं के बीच था। प्रोफेसर एसपी मिश्रा, कुलपति, जो विश्वविद्यालय के मुख्य कार्यकारी अधिकारी थे, ने सभी अनुबंध विक्रेताओं को प्रदान किए और उनके अनुमोदन/निर्देश के अनुसार आदेश जारी किए गए और वह उत्तराखंड आयुर्वेद विश्वविद्यालय अधिनियम, 2009 के प्रावधानों के अनुसार विश्वविद्यालय में सभी कार्यों के लिए जिम्मेदार थे।

7. आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि अनुबंध के बिल भुगतान का मामला वित्त नियंत्रक और विक्रेताओं के बीच था। वित्त नियंत्रक, जो विश्वविद्यालय के आहरण वितरण अधिकारी थे, ने कुलपति की मंजूरी/निर्देश के साथ विक्रेताओं को अनुबंध के सभी बिलों का भुगतान जारी किया था। इसलिए, वह विश्वविद्यालय के सभी वित्तीय कार्यों के लिए जिम्मेदार था। आवेदक ने किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं किया था। प्राथमिकी दर्ज करने से पहले अधिनियम, 1988 की धारा 17 ए के मद्देनजर कोई कानूनी सिफारिश नहीं ली गई थी। इसलिए, कानून की नजर में एफआईआर, चार्जशीट और संज्ञान आदेश खराब हैं।

8. श्री पी.एस. उनियाल, राज्य के लिए विद्वान ब्रीफ होल्डर ने आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता के प्रस्तुतिकरण का विरोध किया।

9. संहिता की धारा 482 में तीन परिस्थितियों की परिकल्पना की गई है, जिसमें निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया जा सकता है, अर्थात् ''संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी न्यायालय की कार्यवाही का दुरुपयोग निवारित करने के लिए या किसी अन्य प्रकार से न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो।'' संहिता की धारा 482 इस प्रकार हैः ''उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों की व्यावृत्तिः— इस संहिता की कोई बात उच्च न्यायालय की ऐसे आदेश देने की अन्तनिर्हित शक्ति को सीमित या प्रभावित करने वाली न समझी जाएगी जैसे इस संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी न्यायालय की कार्यवाही का दुरुपयोग निवारित करने के लिए या किसी अन्य प्रकार से न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो।''

10. इस अंतर्निहित क्षेत्राधिकार को हालांकि व्यापक रूप से या मनमाने ढंग से प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए उचित मामलों में प्रयोग किया जाना चाहिए। क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय इस धारा के तहत, न्यायालय अपील या संशोधन के न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है। इसलिए, आरोप पत्र को रद्द करना या साक्ष्य की सराहना पर संज्ञान आदेश को रद्द करना उचित नहीं है।

11. संहिता की धारा 482 के दायरे को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों में माना है।

12. **मधु लिमाया बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1978 AIR 47** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि निम्नलिखित सिद्धांत उच्च न्यायालय के अंतर्निहित क्षेत्राधिकार के प्रयोग को नियंत्रित करेंगे— (1) शक्ति का सहारा नहीं लिया जाना चाहिए, यदि कोड में पीड़ित पक्ष की शिकायतों के निवारण के लिए विशिष्ट प्रावधान है। (2) इसे संयम से किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या न्याय के सिरों को सुरक्षित करने के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। (3) यह संहिता के किसी अन्य प्रावधान में संलग्न कानून के एक्सप्रेस बार के खिलाफ प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

13. **पेप्सी फूड लिमिटेड बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट और अन्य, 1998 (36) एसीसी 20** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवलोकन किया है कि संहिता की धारा 482 के तहत कोई सीमा नहीं है, लेकिन इन शक्तियों को लागू करने में अधिक सावधानी प्रयोग की जानी है।

14. **ली कुन ही और अन्य बनाम यूपी राज्य और अन्य, जेटी 2012 (2) एससी 237** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि संहिता की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के अभ्यास में न्यायालय सच्चाई में नहीं जा सकता है या अन्यथा आरोपों और सबूतों की सराहना करते हैं, यदि कोई हो, रिकॉर्ड पर उपलब्ध है।

15. **शक्सन बेलथिसर बनाम केरल राज्य और एक अन्य, (2009) 14 एससीसी 466** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवलोकन किया है—

''सीआरपीसी की धारा 482 के तहत पहली सूचना रिपोर्ट और चार्जशीट को रद्द करने का दायरा और शक्ति अच्छी तरह से तय हैं। अदालत द्वारा उक्त शक्ति का प्रयोग कानून और अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए किया जाता है, लेकिन इस तरह की शक्ति का प्रयोग तभी किया जा सकता है जब शिकायतकर्ता द्वारा दायर शिकायत या पुलिस द्वारा दायर चार्जशीट में किसी अपराध का खुलासा नहीं किया गया हो या जब उक्त शिकायत को तुच्छ, अप्रिय या दमनकारी पाया जाता है। इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त मुद्दे पर कई निर्णय दिए गए हैं, जिसमें शिकायत को रद्द करने से संबंधित कानून को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है।''

16. **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल (1992) सप्लीमेंट। (1) एससीसी 335** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि ''(1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में किए गए अभिकथनों को, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया गया हो और उन्हें संपूर्णता में स्वीकार किया गया हो प्रथम दृष्टया किसी अपराध का गठन नहीं होता है या आरोपी के खिलाफ मामला ना बनता हो।

(2) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों तथा प्रथम सूचना रिपोर्ट के साथ संलग्न अन्य सामग्रियां, यदि कोई हों, किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं होता है, जो संहिता की धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा अन्वेषण को धारा 155(2) के तहत एक मजिस्ट्रेट के आदेश के सिवाए सही ना ठहराता हो।

(3) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए अनियंत्रित अभिकथन और उसी के समर्थन में एकत्र की गई साक्ष्य किसी भी अपराध के होने का खुलासा नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ मामला बनाते हों।

(4) जहां, एफआईआर के कथन किसी संज्ञेय अपराध का गठन नहीं करते हैं, परन्तु केवल एक असंज्ञेय अपराध बनता है, संहिता की धारा 155(2) के तहत किसी भी पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी भी अन्वेषण की अनुमति नहीं है।

(5) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से अनुचित हैं, जिनके आधार पर कोई भी प्रज्ञावान व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत एक आपराधिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में और कार्यवाही की निरंतरता और/या जहां कोड में एक विशिष्ट प्रावधान पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावकारी निवारण प्रदान करता है।

(7) जहां एक आपराधिक कार्यवाही प्रकट रूप से दुर्भावना के साथ और/या जहां कार्यवाही को दुर्भावनापूर्ण तरीके से आरोपी पर प्रतिशोध लेने के लिए एक गुप्त

मकसद के साथ और निजी और व्यक्तिगत दुश्मनी के कारण उसे बदनाम करने की दृष्टि से स्थापित किया गया है।

17. **'मैसर्स निहारिका इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, 2021 SCC OnLine SC 315** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार धारित किया है:–

> ''10. इस न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णयों से, ख्वाजा नजीर अहमद (सुप्रा) के मामले में प्रिवी काउंसिल के निर्णय से, विधि के निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैं:
>
> i) पुलिस के पास दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIV के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत संज्ञेय अपराधों की विवेचना हेतु वैधानिक अधिकार और कर्तव्य हैं,
>
> ii) अदालतें संज्ञेय अपराधों की किसी विवेचना को विफल नहीं करेंगी;
>
> iii) हालांकि, ऐसे मामलों में जहां कोई संज्ञेय अपराध या प्रथम सूचना रिपोर्ट में किसी प्रकार के अपराध का खुलासा नहीं होता है, न्यायालय अन्वेषण जारी रहने की अनुमति नहीं देगा;
>
> iv) 'दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों में, रद्द करने की शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए। (धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों के मानक को उस मानदंड के साथ भ्रमित नहीं किया जाना है जो मृत्युदंड के संदर्भ में तैयार किया गया है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पहले बताया गया है);
>
> v) एक प्राथमिकी/शिकायत का अन्वेषण करते समय, जिसे रद्द करने की मांग की जाती है, अदालत विश्वसनीयता या वास्तविकता अन्यथा एफआईआर/शिकायत में लगाए गए आरोपों के रूप में अन्वेषण नहीं कर सकती है;
>
> vi) आपराधिक कार्यवाही को प्रारंभिक चरण में समाप्त नहीं किया जाना चाहिए;
>
> vii) एक शिकायत/एफआईआर पुलिस के पास दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIV के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत संज्ञेय अपराधों की विवेचना हेतु वैधानिक अधिकार और कर्तव्य हैं,
>
> viii) आमतौर पर, अदालतों का पुलिस के क्षेत्राधिकार को हड़पना वर्जित है, क्योंकि राज्य के दो अंग गतिविधियों के दो विशिष्ट क्षेत्रों में काम करते हैं। हालांकि, अदालत की अंतर्निहित शक्ति को न्याय के सिरों को सुरक्षित करने या धारा 482 दं0प्र0सं0 द्वारा प्रक्रिया के उपरोक्त को रोकने के लिए मान्यता दी गई है।
>
> ix) न्यायपालिका और पुलिस के कार्य पूरक हैं, अतिव्यापी नहीं;

x) सिवाय उन असाधारण मामलों में जहां गैर–हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप न्याय की हत्या, न्यायालय और न्यायिक प्रक्रिया को अपराधों की अन्वेषण के चरण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए;

xi) न्यायालय की असाधारण और निहित शक्तियां न्यायालय पर एक मनमाना क्षेत्राधिकार प्रदान नहीं करती हैं ताकि वह अपनी सनक या मनमर्जी के अनुसार कार्य कर सके;

xii) प्रथम सूचना रिपोर्ट एक विश्वकोश नहीं है जिसमें रिपोर्ट किए गए अपराध से संबंधित सभी तथ्यों और विवरणों का खुलासा होना चाहिए। इसलिए, जब पुलिस द्वारा अन्वेषण जारी है, तो अदालत को एफआईआर में आरोपों के गुण में नहीं जाना चाहिए। पुलिस को अन्वेषण पूरा करने की अनुमति दी जानी चाहिए। धुंधले तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष की उद्घोषणा करना समय से पहले होगा कि शिकायत/एफआईआर की अन्वेषण के लायक नहीं है या यह कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के लिए है। अन्वेषण के दौरान या बाद में, यदि अन्वेषण अधिकारी को पता चलता है कि शिकायतकर्ता द्वारा किए गए आवेदन में कोई सार नहीं है, तो अन्वेषण अधिकारी विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष एक उचित रिपोर्ट/सारांश दर्ज कर सकता है जिसे विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा ज्ञात प्रक्रिया के अनुसार माना जा सकता है;

xiii) धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत शक्ति बहुत व्यापक है, लेकिन व्यापक शक्ति के सम्मेलन के लिए अदालत को सतर्क रहने की आवश्यकता है। यह अदालत पर एक गंभीर और अधिक मेहनती कर्तव्य डालती है;

xiv) हालांकि, उसी समय यदि अदालत यह उचित पाती है, तो रद्द करने के मापदंडों के संबंध में और कानून द्वारा लगाए गए आत्म–संयम, विशेष रूप से आरपी कपूर (सुप्रा) और भजन लाल (सुप्रा) के मामलों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडों के अनुसार एफआईआर/शिकायत को रद्द करने का अधिकार क्षेत्र है; तथा

xv) जब कथित अभियुक्तों द्वारा प्राथमिकी को रद्द करने की प्रार्थना की जाती है, तो अदालत जब धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत शक्ति का प्रयोग करती है, तो केवल यह विचार करना होगा कि एफ.आई.आर. में आरोप संज्ञेय अपराध के कारित का खुलासा करते हैं या नहीं और गुण पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है कि क्या आरोप संज्ञेय अपराध है या नहीं और अदालत को अन्वेषण एजेंसी/पुलिस को एफ़आईआर में आरोपों के अन्वेषण करने की अनुमति देनी है''

''23. उपरोक्त कारणों के मद्देनजर, मुख्य मुद्दे पर हमारे अंतिम निष्कर्ष, कि क्या धारा 482 दं0प्र0सं0 और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के

तहत रद्द करने के आवेदन के लम्बित रहने के दौरान उच्च न्यायालय द्वारा अंतरिम आदेश और/या ''कोई दंडात्मक कदम नहीं अपनाया जाना चाहिए'' को पारित करना उचित होगा तथा अन्वेषण के दौरान या जब तक धारा 173 दं0प्र0सं0 के तहत अंतिम रिपोर्ट/चार्जशीट दायर नहीं की जाती है, तब तक आरोपी को गिरफ्तार न करने के आदेश को पारित करने में उच्च न्यायालय को धारा 482 दं0प्र0सं0 और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्तियों के प्रयोग में आपराधिक कार्यवाही/शिकायत/प्राथमिकी को रद्द करने/न करने/न करने के लिए हमारे अंतिम निष्कर्ष निम्नानुसार हैं:–

i) पुलिस के पास दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIV के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत संज्ञेय अपराधों की विवेचना हेतु वैधानिक अधिकार और कर्तव्य हैं,

ii) अदालतें संज्ञेय अपराधों की किसी विवेचना को विफल नहीं करेंगी;

iii) हालांकि, ऐसे मामलों में जहां कोई संज्ञेय अपराध या प्रथम सूचना रिपोर्ट में किसी प्रकार के अपराध का खुलासा नहीं होता है, न्यायालय अन्वेषण जारी रहने की अनुमति नहीं देगा;

iv) 'दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों में, रद्द करने की शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए। (धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों के मानक को उस मानदंड के साथ भ्रमित नहीं किया जाना है जो मृत्युदंड के संदर्भ में तैयार किया गया है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पहले बताया गया है);

v) एक प्राथमिकी/शिकायत का अन्वेषण करते समय, जिसे रद्द करने की मांग की जाती है, अदालत विश्वसनीयता या वास्तविकता अन्यथा एफआईआर/शिकायत में लगाए गए आरोपों के रूप में अन्वेषण नहीं कर सकती है;

vi) आपराधिक कार्यवाही को प्रारंभिक चरण में समाप्त नहीं किया जाना चाहिए;

vii) एक शिकायत/एफआईआर पुलिस के पास दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIV के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत संज्ञेय अपराधों की विवेचना हेतु वैधानिक अधिकार और कर्तव्य हैं,

viii) आमतौर पर, अदालतों का पुलिस के क्षेत्राधिकार को हड़पना वर्जित है, क्योंकि राज्य के दो अंग गतिविधियों के दो विशिष्ट क्षेत्रों में काम करते हैं। हालांकि, अदालत की अंतर्निहित शक्ति को न्याय के सिरों को सुरक्षित करने या धारा 482 दं0प्र0सं0 द्वारा प्रक्रिया के उपरोक्त को रोकने के लिए मान्यता दी गई है।

ix) न्यायपालिका और पुलिस के कार्य पूरक हैं, अतिव्यापी नहीं;

x) सिवाय उन असाधारण मामलों में जहां गैर–हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप न्याय की हत्या, न्यायालय और न्यायिक प्रक्रिया को अपराधों की अन्वेषण के चरण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए;

xi) न्यायालय की असाधारण और निहित शक्तियां न्यायालय पर एक मनमाना क्षेत्राधिकार प्रदान नहीं करती हैं ताकि वह अपनी सनक या मनमर्जी के अनुसार कार्य कर सके;

xii) प्रथम सूचना रिपोर्ट एक विश्वकोश नहीं है जिसमें रिपोर्ट किए गए अपराध से संबंधित सभी तथ्यों और विवरणों का खुलासा होना चाहिए। इसलिए, जब पुलिस द्वारा अन्वेषण जारी है, तो अदालत को एफआईआर में आरोपों के गुण में नहीं जाना चाहिए। पुलिस को अन्वेषण पूरा करने की अनुमति दी जानी चाहिए। धुंधले तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष की उद्घोषणा करना समय से पहले होगा कि शिकायत/एफआईआर की अन्वेषण के लायक नहीं है या यह कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के लिए है। अन्वेषण के दौरान या बाद में, यदि अन्वेषण अधिकारी को पता चलता है कि शिकायतकर्ता द्वारा किए गए आवेदन में कोई सार नहीं है, तो अन्वेषण अधिकारी विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष एक उचित रिपोर्ट/सारांश दर्ज कर सकता है जिसे विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा ज्ञात प्रक्रिया के अनुसार माना जा सकता है;

xiii) धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत शक्ति बहुत व्यापक है, लेकिन व्यापक शक्ति के सम्मेलन के लिए अदालत को सतर्क रहने की आवश्यकता है। यह अदालत पर एक गंभीर और अधिक मेहनती कर्तव्य डालती है;

xiv) हालांकि, उसी समय यदि अदालत यह उचित पाती है, तो रद्द करने के मापदंडों के संबंध में और कानून द्वारा लगाए गए आत्म–संयम, विशेष रूप से आरपी कपूर (सुप्रा) और भजन लाल (सुप्रा) के मामलों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडों के अनुसार एफआईआर/शिकायत को रद्द करने का अधिकार क्षेत्र है; तथा

xv) जब कथित अभियुक्तों द्वारा प्राथमिकी को रद्द करने की प्रार्थना की जाती है, तो अदालत जब धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत शक्ति का प्रयोग करती है, तो केवल यह विचार करना होगा कि एफ.आई.आर. में आरोप संज्ञेय अपराध के कारित का खुलासा करते हैं या नहीं और गुण पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है कि क्या आरोप संज्ञेय अपराध है या नहीं और अदालत को अन्वेषण एजेंसी/पुलिस को एफ़आईआर में आरोपों के अन्वेषण करने की अनुमति देनी है'',

xvi) पूर्वोक्त पैरामीटर लागू होंगे और/या उपरोक्त पहलुओं पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है, जबकि धारा 482 दं0प्र0सं0

और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्तियों के प्रयोग में एक अंतरिम याचिका में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया है। हालांकि, रद्द करने कि लम्बित रहने के दौरान अन्वेषण के स्टे रहने का अंतरिम आदेश परिधि के साथ पारित किया जा सकता है। इस तरह के अंतरिम आदेश को नियमित, आकस्मिक और यांत्रिक रूप से पारित करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। आमतौर पर, जब अन्वेषण चल रहा है और तथ्य धुंधले हैं और पूरी साक्ष्य/सामग्री उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं है, तो उच्च न्यायालय को गिरफ्तारी ना करने के अंतरिम आदेश या ''कोई दंडात्मक कदम नहीं अपनाया जाना चाहिए'' को पारित करने से बचना चाहिए और अभियुक्त को सक्षम न्यायालय के समक्ष धारा 438 सीआरपीसी के तहत अग्रिम जमानत के लिए आवेदन करने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय द्वारा धारा 482 दं0प्र0सं0 या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रद्द याचिका को खारिज करते समय तथा अन्वेषण या जब तक अन्वेषण पूरा नहीं हो जाता है और/या अंतिम रिपोर्ट/चार्जशीट धारा 173 दं0प्र0सं0 के तहत दायर नहीं की जाती है, गिरफ्तारी ना करने और या ''कोई दंडात्मक कदम'' नहीं उठाने के आदेश को पारित किया जाना उचित नहीं है, उच्च न्यायालय ऐसा नहीं करेगा;

xvii) यहां तक कि ऐसे मामले में जहां उच्च न्यायालय की राय है कि धारा 482 दं0प्र0सं0 और/या अनुच्छेद 226 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए व्यापक मापदंडों पर विचार करने के बाद, एक असाधारण मामला आगे की अन्वेषण के अंतरिम ठहराव के अनुदान के लिए बनाया गया है। भारत के संविधान का उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय को संक्षिप्त कारण बताना होगा कि ऐसा अंतरिम आदेश क्यों है, वारंट और/या पारित करने की आवश्यकता है ताकि यह न्यायालय द्वारा मन के आवेदन को प्रदर्शित कर सके और उच्च मंच इस तरह के अंतरिम आदेश को पारित करते समय उच्च न्यायालय के साथ क्या तौला गया था, इस पर विचार कर सकता है।

xviii) जब भी उच्च न्यायालय द्वारा एक अंतरिम आदेश पारित किया जाता है कि ''कोई दंडात्मक कदम नहीं अपनाया जाना चाहिए'' पूर्वोक्त मापदंडों के भीतर, उच्च न्यायालय को यह स्पष्ट करना चाहिए कि ''कोई दंडात्मक कदम नहीं अपनाया जाना चाहिए'' का मतलब क्या है, क्योंकि शब्द के रूप में ''कोई दंडात्मक कदम नहीं अपनाया जाना चाहिए'' को बहुत अस्पष्ट और/या व्यापक कहा जा सकता है जिसे गलत समझा जा सकता है या गलत तरीके से लागू किया जा सकता है।''

18. **कप्तान सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 2021 SCC OnLine SC 580** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अवलोकन किया है कि **ध्रुवराम मुरलीधर सोनार बनाम**

महाराष्ट्र राज्य (2019) 18 एससीसी 191 भजन लाल (सुप्रा) के फैसलों पर विचार करने के बाद, यह धारा के तहत शक्तियों का प्रयोग है कार्यवाही को रद्द करने के लिए 482 दं0प्र0सं0 एक अपवाद है और नियम नहीं है। यह आगे देखा गया है कि धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत निहित क्षेत्राधिकार हालांकि व्यापक रूप से, सावधानीपूर्वक और सावधानी के साथ प्रयोग किया जाना है, केवल जब इस तरह के अभ्यास को विशेष रूप से अनुभाग में निर्धारित परीक्षणों द्वारा उचित ठहराया जाता है। यह आगे देखा गया है कि धारा 482 दं0प्र0सं0 के तहत शक्तियों के प्रयोग में कार्यवाही को रद्द करने के चरण में साक्ष्य की सराहना स्वीकार्य नहीं है। **सीबीआई बनाम अरविंद खन्ना, (2019) 10 एससीसी 686, तेलंगाना बनाम मानागिपेट, (2019) 19 एससीसी 87** और **एक्स.वाई.जेड. बनाम गुजरात राज्य के मामले में (2019) 10 एससीसी 337** के मामले में इसी तरह का विचार व्यक्त किया गया है।

19. **निरंजन हेम चंद्र सशितल बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2013) 4 एससीसी 642** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने देखा कि भ्रष्टाचार को डिग्री से नहीं आंका जाना चाहिए, भ्रष्टाचार माताओं के विकार के लिए, सामाजिक प्रगति को नष्ट कर देता है, अवांछनीय महत्वाकांक्षाओं को तेज करता है, विवेक को मारता है, जेटिसन संस्थानों की महिमा, संस्थानों को पंगु बना देता है किसी देश का आर्थिक स्वास्थ्य, सभ्यता की भावना और शासन की बुराई को जन्म देता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि धन का अनैतिक अधिग्रहण ईमानदारी में विश्वास करने वाले लोगों की ऊर्जा को नष्ट कर देता है, और इतिहास पीड़ा के साथ रिकॉर्ड करता है कि वे कैसे पीड़ित हुए हैं; और एकमात्र उद्धारक तथ्य यह है कि सामूहिक संवेदनशीलता इस तरह के दुःख का सम्मान करती है क्योंकि यह संवैधानिक नैतिकता के अनुरूप है। इसमें किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार के प्रति असहिष्णुता पर जोर दिया गया था।

20. **सुब्रमण्यम स्वामी बनाम सीबीआई, (2014) 8 एससीसी 682** में माननीय सर्वोच्च की संविधान पीठ न्यायालय ने देखा कि भ्रष्टाचार राष्ट्र का दुश्मन है और भ्रष्ट लोक सेवकों पर नज़र रखना और ऐसे व्यक्तियों को दंडित करना 1988 अधिनियम का एक आवश्यक जनादेश है।

21. वर्तमान मामले में, विद्वान विशेष न्यायाधीश ने रिकॉर्ड पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार करने के बाद संज्ञान लिया। विचारण के समय ही उक्त आरोपों का परीक्षण किया जाना आवश्यक है। यह न्यायालय संहिता की धारा 482 के तहत एक आवेदन में एक समानांतर विचारण नहीं कर सकता है। यह अच्छी तरह से तय है कि संज्ञान और समन के लिए मामले पर विचार करने के समय, मामले की खूबियों का विचारण नहीं किया जा सकता है और इस न्यायालय के लिए आरोपों की शुद्धता को स्थगित करने के लिए तथ्यात्मक क्षेत्र में प्रवेश करना पूरी तरह से अभेद्य है। यह न्यायालय आरोपों की वास्तविकता की भी अन्वेषण नहीं करेगा क्योंकि यह न्यायालय संहिता की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए अपील या संशोधन न्यायालय के रूप में कार्य नहीं

करता है। इस मामले में यह नहीं कहा जा सकता है कि आवेदक के खिलाफ कोई आरोप नहीं हैं। इसके अलावा, आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता इस स्तर पर यह दिखाने में सक्षम नहीं हो सकते हैं कि आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से अनुचित हैं, जिसके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आवेदक के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

22. इसलिए, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के प्रकाश में, वर्तमान मामला माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किसी भी श्रेणी में नहीं आता है। तदनुसार, चार्जशीट को रद्द करने और पूरी कार्यवाही के साथ संज्ञान आदेश को रद्द करने की प्रार्थना से इन्कार कर दिया जाता है।

23. चूंकि, मामले को चलाया जाना है, इसलिए मैं यह स्पष्ट करता हूं कि पहले की गई टिप्पणियां केवल संहिता की धारा 482 के तहत दायर इस आवेदन के निपटान के लिए हैं। ये अवलोकन मामले का फैसला करते समय विचारण न्यायालय को प्रभावित नहीं करेंगे।

24. पूर्वोक्त निर्देशों के साथ, संहिता की धारा 482 के तहत दायर आवेदन को निरस्त जाता है।

.....
आलोक कुमार वर्मा, जे.
(अवकाश न्यायाधीश)

दिनांकः 03 फरवरी, 2022
जेकेजे/पंत